सम्राट विक्रमादित्य

अवन्ती नरेश गंधर्वसेन के दो पुत्र थे-भर्तृहरि और विक्रमादित्य। पिता के देहान्त के बाद भर्तृहरि राजा बने विक्रमादित्य युवराज। भर्तृहरि विद्वान और न्यायप्रिय थे। छोटे भाई विक्रमादित्य से बहुत प्यार करते थे। उसकी विद्वत्ता और न्यायशीलता आदि गुणों का सम्मान करते थे।

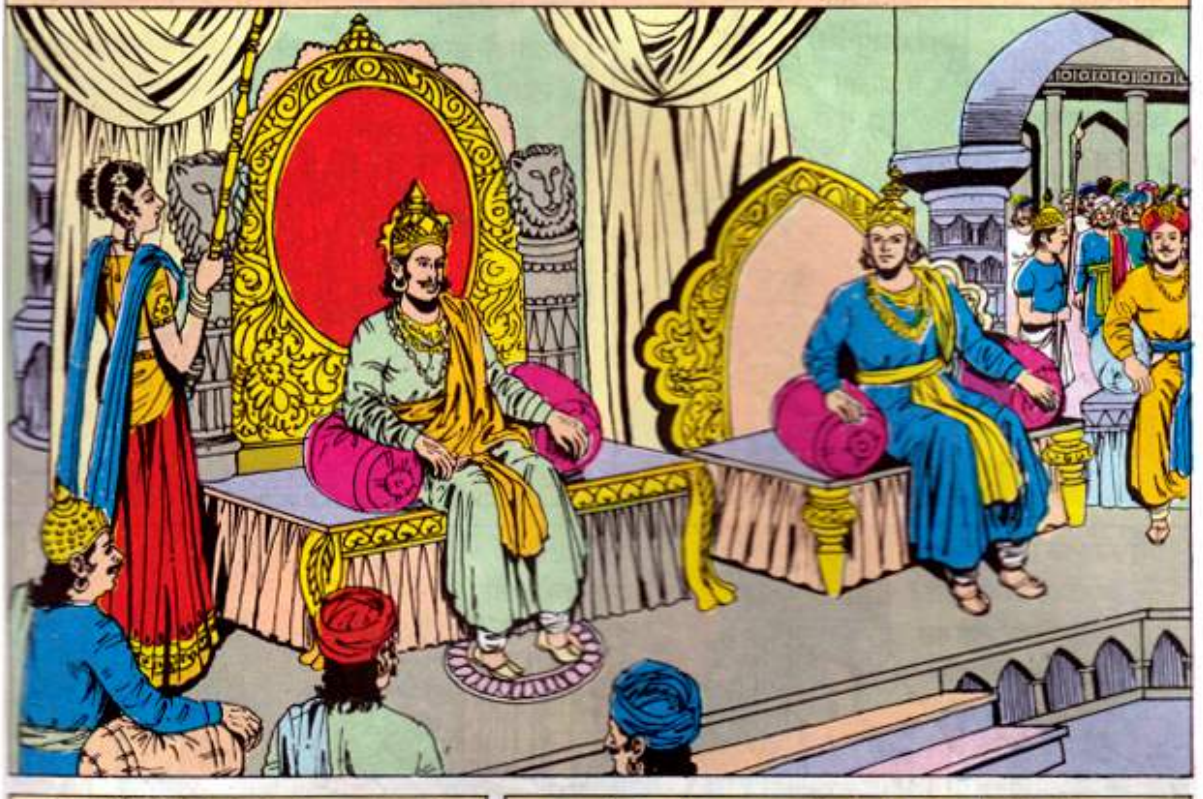

एक दिन भर्तृहरि की रानी अनंगसेना ने कुमार विक्रमादित्य का अपमान कर दिया। विक्रमादित्य उससे दुःखी होकर बिना किसी से कुछ कहे चुपचाप घर छोड़कर वन में चले गये।

जब भर्तृहरि को पता चला तो उसने सैनिकों को आदेश दिया।

एक दिन भर्तृहरि राज्यसभा में उदास बैठे थे। तभी द्वारपाल ने सूचना दी।
महाराज ! एक गरीब ब्राह्मण आपके दर्शन करना चाहता है।
ब्राह्मण को सम्मानपूर्वक ले आओ।
ब्राह्मण ने राजा को आशीर्वाद देते हुए एक फल भेंट किया–
हे प्रजापालक ! यह देवप्रदत्त दिव्य फल आपको भेंट करना चाहता हूँ। इस दिव्य फल को खाने वाला, सदा तरुण और स्वस्थ रहता है।
विप्रदेव, ऐसा चमत्कारी फल आपको कहाँ से मिला।
महाराज ! मैंने देवी की आराधना की थी। उसने प्रसन्न होकर मुझे यह अमर फल दिया है।
तो तुम स्वयं इसे क्यों नहीं खाना चाहते ?
महाराज ! मैं तो वैसे ही दरिद्रता से दुःखी हूँ। फिर अधिक दिन जीकर क्या करूँगा ? आप जैसा प्रजापालक राजा दीर्घजीवी होगा तो सबका भला होगा। आप इस अमर फल को स्वीकार कर कृतार्थ कीजिए।
राजा ने अमर फल लेकर बदले में ब्राह्मण को इतना धन दिया कि उसकी गरीबी मिट गई।
महाराज की जय हो !
विप्रवर ! कृपया यह धन स्वीकार कीजिये।

सायंकाल भर्तृहरि राजमहलों में आ रहे थे।

मैं इस अमर फल को खाकर क्या करूँगा। अच्छा होगा यह फल अपनी प्राणप्रिया रानी को दे दूँ।

राजमहल में पहुँचकर भर्तृहरि ने रानी से कहा—

प्रिये ! मैं तुम्हारे यौवन का फूल इसी तरह हमेशा खिला-खिला देखना चाहता हूँ। बुढ़ापा और मौत सदा तुमसे दूर रहे।

स्वामी ! आज आप यह क्या कह रहे हैं ? यौवन और जीवन किसका स्थायी रहता है ?

राजा ने अपने दुपट्टे में छिपा फल निकालकर रानी को दिया—

प्रिये ! यह अमर फल है। इसे खाने से तुम्हारा सौन्दर्य और यौवन कभी नष्ट नहीं होगा। लो खा लो।

रानी प्रसन्न होकर बोली—

वाह स्वामी ! आपका कितना प्रेम है मुझ पर। प्रातः स्नान आदि करके खाऊँगी इसे।

दूसरे दिन प्रातः रानी फल खाने बैठती है, तभी हाथ रुक गया—

इस फल को मैं अपने प्रेमी नगर-रक्षक (कोतवाल) को दे दूँ तो वह कितना प्रसन्न होगा मुझ पर ?